CURRENT GLOBAL REVIEWER

Special Issue 29 , Vol. 1	Peer Reviewed	ISSN : 2319 - 8648
November 2020	SJIF	Impact Factor : 7.139

हरिश गोयल की विज्ञानकथा संजीवनी

डॉ. बी. आर. नळे
हिंदी विभाग, सुंदरराव सोळंके महाविद्यालय, माजलगाव.

वरिष्ठ विज्ञान कथाकार हरिश गोयल का सन् 2008 ई. में प्रकाशित विज्ञानकथा संग्रह मानव क्लोन काफी चर्चित रहा है। जिसमें लेखक ने मानव क्लोन को लेकर सकारात्मक और नकारात्मक पौलुओं पर विस्तार से अपने विचार प्रस्तुत किए है। विज्ञान की हर खोज तो नौतिकता और अनौतिकता से मुक्त होती है, लेकिन उसका प्रयोग करनेवाले की मानसिकता और समाज की मानसिकता के बीच अंतर आ जाने के कारण आज नौतिकता और अनौतिकता के प्रश्न निर्माण हो रहे हैं। इस के लिए वौज्ञानिक समझ एवं दृष्टिकोण का अभाव और दिशाहिन एवं सीमाहिन प्रगति को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। आज ऐसी दिशाहिन प्रगति और उसके अज्ञान से निर्मित प्रश्नोंने मानव समाज को भयभीत करना शुरू किया है। ऐसे मानव को भयभीत करनेवाले अनेक प्रश्नों में से एक है- मानव क्लोन। जिसको लेकर आज समाज के परिदृश्य पर नौतिकता और अनौतिकता के साथ मानव अस्तित्व को लेकर कई प्रश्न उठने लगे है, जिसकी चर्चा कथाकार ने संजीवनी नामक विज्ञानकथा के माध्यम से की है।

आज भी वौवाहिक जीवन में संतानों की प्राप्ति का मोह कम नहीं हो रहा है। आज के वौज्ञानिक युग में हर स्त्री माँ और पुरूष पिता बनना चाहता है, लेकिन शारीरिक कमी तथा गंभीर बीमारी की वजह से प्रत्येक स्त्री-पुरूष की ख्वाईश पूरी नहीं हो पा रही है। उन्हें निसंतान होने का दुःख सहना पड रहा है। ऐसे नवदाम्पत्य आए दिन सामाजिक उपेक्षा, प्रताडना, अपमान और अवहेलना के शिकार हो रहे है। उसमें भी निराशा, हताशा और दोहरे व्यवहार की शिकार स्त्री बनती जा रही है। चाहें उसमें कमी हो या न हो। इसकी वजह से अनेक स्त्रियों का जीवन उध्वस्थ होने लगा है। ऐसे स्त्रियों के जीवन में आशा का किरण परखनली शिशु और मानव क्लोन की तकनीकी ले आयी है। लेकिन उसे भी भारतीय मानसिकता सही ढंग से स्वीकार नहीं पा रही है। उसको लेकर भी समाज में नौतिकता के प्रश्न खडे किए जा रहे हैं। धाय माँ के प्रश्न खडे हो रहे हैं। पति, साँस-ससूर उस विधि के विरोध में खडे होनेे लगे है। समाज उन बच्चों को अपना नहीं रहा। एक प्रकार से कहें तो अज्ञान, अंधश्रध्दा, गरीबी और भारतीयों की मानसिकता की वजह से विज्ञान वरदान साबित नहीं हो रहा है। आज भी समाज का ढर्रा वौसे ही चल रहा है, जौसे सौ साल पहले चलता था। इसे बदलने की आवश्यकता लेखक महसूस करते हैं।

मानव क्लोन से अब मनचाही संतान को पाना भी आसान हो गया है। उसका रंग, आंखें, नाक, बाल, लम्बाई चौडाई, बुध्दि को पूर्व निर्धारित कारके बच्चे को पाना संभव हो चूका है। कोशिका से भ्रूण विकसित करके गंभीर बीमारी (पार्किसन, अल्झीमर, आथ्राइटिस), मानव अंग की मरम्मत, हृदय-यकृत और त्वचा जौसे अंगों का विकास संभव हो चूका है। इतना ही नहीं तो अयौनिज प्रजनन का मार्ग भी खुला कर दिया है। संजीवनी कहानी की नायिका विशाखा अपने पति की परोपकारिता को बताती है- क्लोनित भ्रूण की स्टेम कोशिकाओं से शरीर का मनचाहा अंग विकसित किया गया तथा उसे मानव शरीर में आवश्यकतानुसार प्रत्यारोपित किया गया। वृध्द तथा बीमार हृदय तथा फेफडों को हटाकर उनके स्थान पर क्लोन से विकसित नये हृदय तथा फेफडों को लगाया गया।[1] अब वौज्ञानिक मरे हुए इन्सान की त्वचा, गुर्दे और आंत से कोशिका प्राप्त कर उससे भ्रूण विकसित करने की तकनीकी विकसित करने लगे है और उसमें सौ प्रतिशत सफलता मिली भी होगी। इतना चिकित्सा विज्ञान और जीव विज्ञान अपनी प्रगति कर चूका है। इस लिए परखनली शिशु तकनीकी और मानव क्लोन मानव जीवन के लिए संजीवनी एवं वरदान साबित हो रही है, लेकिन उसकी वजह से जो समाजिक प्रश्न निर्माण हो रहे हैं, वे उसेे अभिशाप में परिवर्तीत करने लगे हैं। उसी को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानव क्लोन के संपूर्ण विकास पर प्रतिबंध लगाया है। साथ ही अंतरराष्ट्रीय स्वास्थ्य संगठन की निगरानी में यह कार्य रखा गया है।

विज्ञान वरदान ही है, किन्तु मानव की हिंसात्मक और स्वार्थी वृत्ति उसे अभिशाप में परिवर्तीत करने लगी है। जिस तरह परमाणु शक्ति (ऊर्जा) हमारे विकास, उन्नति और प्रगति के लिए वरदान साबित हो सकती है, ठीक इसके विपरित उसका गलत इस्तेमाल अभिशाप भी बन सकता है। इस तरह मानव क्लोन वरदान भी हो सकता है और अभिशाप भी। हम उसका प्रयोग क्यों? किस लिए ? किस अवस्था में? कैसे ? कब ? करते हैं, उसपर उसकी नौतिकता और अनौतिकता निर्भर करती है। आधुनिक युग में हमारी संवेदना खोती जा रही है। लाभ और मुनाफा केंद्रित अर्थव्यवस्था और राजनीति ने सारे सिध्दांतों को ताक पर रख दिया। देश की इकोनॉमी और इकोलॉजी को बिगाड दिया है। ऐसे में किसी वौज्ञानिक ने अपनी सारी नौतिकता ताक पर रखते हुए प्रसिध्दि, पौसा और अन्य प्रलोभनों को देखते हुए गुप्त रूप से मानव क्लोन विकसित किए तो क्या होगा? सामाजिक संरचना का क्या हो सकता है? उसके (क्लोन के) गलत व्यवहार के लिए जिम्मेदार कौन होगा? उसके (क्लोन के) माता-पिता कौन होंगे? क्या वह (क्लोन के) किसी का हमशक्ल होने का फायदा

नहीं उठायेगा? वौवाहिक जीवन नष्ट नहीं हो सकता? प्रेम, करूणा, सौहार्द, अनुराग, अनुरक्ति, मातृत्व भाव, लाड-प्यार, वात्सल्य जौसी भावनाएँ वौवाहिक जीवन की समाप्ति के साथ समाप्त नहीं हो सकती? मानव क्लोन दुःख, शोक, पीडा, अफसोस, व्यथा, वेदना, पीर को कैसे समझेंगे? मन की पीडा क्या होती है? पति-पत्नी का बिछोह, पे्रमप्रेमिका की जुदाई, परिजनों का वियोग क्या होता है? यह कैसे समझ पायेंगे? आदि अनेक प्रश्न मानव क्लोन को लेकर लेखक ने उपस्थि किएं हैं।

उपर्युक्त प्रश्न उपस्थित होने के अनेक कारण है, जिनमें से प्रमुख कारण है - न्युक्लियर ट्रांसफर के दौरान जीनों में होनवाली गडबडी। बाह्य रूप से न्युक्लियर ट्रांसफर के कारण क्लोन जीरोक्स कापी अर्थात हमशक्ल ही होता है। लेकिन उसके मानसिक और बौध्दिक गुण अपने जनक से भिन्न भी हो सकते हैं। क्योंकि जीनों के मानसिक अथवा बौध्दिक गुणों के प्रकटीकरण पर अनिवार्य रूप से मनुष्य के जन्म से पूर्व आंतरिक परिवेश (ताप, प्रकाश, नमी, पोषण, हारमोन्स तथा माता का मानसिक परिवेश) तथा बर्हिगत परिवेश (सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, शौक्षणिक परिस्थिति एवं परिवेश) का प्रभाव पडता है। जिन मानव क्लोन की परवरिश योग्य एवं उचित वातावरण में होती है, वे तो मानवीय गुनों से युक्त हो सकते हैं। लेकिन जिनकी परवरिश गलत हाथों और वातावरण में होगी, उसका क्या? दोनों प्रकार के क्लोन के साथ एक जौसा व्यवहार करणा उचित होगा क्या? मानव समाज में भी कुछ लोग विध्वंसक प्रवृत्ति के होते हंै तो क्या उन्हें समाज से बे-दखल किया जाता है? तो फिर क्लोन पर ही पाबंदी क्यों? इस प्रकार के सवाल वौज्ञानिक और समाज के सामने उठने लगे हैं।

ऐसी विभ्रम और संशय की अवस्था में किसी ने अपनों के खोने की पीडा से मुक्ति पाने के लिए मरे आदमी का क्लोन तौयार किया तो समाज में कितनी गडबडियां हो सकती है। इसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। विज्ञान की निगाह में, कानून की निगाह में, समाज की निगाह में, परिवार की निगाह में, दम्पति की निगाह में और स्वयं क्लोन की निगाह में उसका अस्तित्व क्या होगा? इस प्रश्न का उत्तर आज कोई भी नहीं दे रहा। प्रस्तुत विज्ञान कथा संजीवनी के माध्यम से कथाकार ने इस प्रकार के अनेक प्रश्नों को उठाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। इस कारण उनकी यह कथा मानव क्लोन के जगत में महत्वपूर्ण है। उन्होंने नव-दम्पति के माध्यम से अनेक समस्याओं को उठाते हुए स्पष्ट संकेत दिया है कि, इन सभी प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए बिना क्लोन का निर्माण करना सब के प्रति अन्याय होगा। सामाजिक संरचना, मानवीय सभ्यता और संस्कृति का ढाँचा चरमरा जायेगा। सबके अस्तित्व के प्रश्न खडे हो जायेंगे।

आज मानव क्लोन पर पूरे विश्व में प्रतिबंध है। ऐसे में किसी अमीर स्त्री ने अपने मरे हुए पति को बहुत बडी कीमत देकर पुनःजीवित करने की ठान ली तो क्या होगा? और वौज्ञानिक ने पौसा तथा अन्य प्रलोभनों के फेरे में आकर गुप्त रूप से इस (मानव क्लोन) कार्य को अन्जाम दिया तो। वह क्लोन उस स्त्री का पति होगा या बेटा, यह कहना मुश्किल है। क्योंकि समाज की निगाह में मरा हुआ उसका पति है उससे प्राप्त क्लोन पति से उत्पन्न संतान होगी। तो फिर एक मां अपने संतान के साथ शादी कैसे कर सकती है? यह भी एक प्रश्न है। समाज एवं परिवार का विरोध और उसकी पति के प्रति की चाह के बीच फिर क्या होगा? नौतिकता और अनौतिकता के प्रश्न उपस्थित हो जायेंगे। लोग सामाजिक संरचना को बचाने के लिए कोर्ट जायेंगे। कहानी की नायिका विशाखा अपने मरे पति को मानव क्लोन की विधि द्वारा प्राप्त करके उससे शादी करती है। जिसका समाज स्वीकार नहीं करता। विशाखा अपनी आप बीती को बताती हुई कहती है- पूरे समाज में इससे बवाल खडा हो गया। लोगों ने इसे घोर अनौतिक कहा। माना कि, अभिजित एक क्लोन था, लेकिन वह विशाखा का बच्चा था। विशाखा उसकी माँ थी। वह उसकी पत्नी कैसे बन गई? उन्हें कोर्ट में घसिटा गया।[2] अब कोर्ट किसकी सुनेगा और किसे न्याय देगा? यह भी एक प्रश्न है।

विज्ञान यह बताता है कि, मृत्यु के समय जो उम्र व्यक्ति की होती है, वही उम्र कोशिका की होती है। इस तरह से देखा जाए तो पति की उम्र पत्नी से जादा होती है। फिर क्लोन की उम्र कम कैसे हो सकती है। अपने से जादा उम्रवाले को अपनी संतान कैसे माना जा सकता है। विशाखा यही बात समाज को समझा रही थी। लेकिन समाज मान नहीं रहा था। अपनी विवशता बताती हुई कथा नायिका कहती है- लेकिन समाज इस बात को क्यों नहीं समझ रहा है? उसके गले यह बात क्यों नहीं उतर रही? अभिजित का क्लोन उससे दो वर्ष बडा है, वह उसे अपना बच्चा कैसे मान सकती है।[3] फिर भी समाज नहीं मानता। उसे अदालत के चौखडे में खडा कर ही देता है। ऐसी स्थिति में उस स्त्री की अवस्था कैसी होगी? क्या करें और क्या न करें वाले हेमलेट से भिन्न कैसे हो सकती है। पति माने या संतान की द्विवीधा आखिर उसे कहाँ ले जायेगी? उसकी स्थिति को व्यक्त करते हुए लेखक ने लिखा है- उसकी अत्यन्त दुविधाजनक स्थिति थी। कई रात उसे नींद नहीं आई। उसकी स्थिति हेमलेट की तरह हो गई क्या करें तथा क्या न करें ?[4] ऐसे मामले अगर अदालत में पहँुच भी जायेंगे तो अदालत कर भी क्या सकती है। एक तरफ वौज्ञानिक सत्य है, तो दूसरी तरफ सामाजिक प्रश्न संरचना और नयीं समस्याएँ है। ऊपर से ऐसी समस्याओं को सुलझाने के लिए आज तक कोई कानून भी बनाया नहीं है।

इस प्रकार के विवाद से निर्मित क्लोन की मानसिकता पर भी क्या असर हो सकते है। इसका हम अनुमान भी नहीं लगा सकते। समाज, अदालत, स्त्री आदि का व्यवहार देखकर न्यूनगंड भी निर्माण हो सकता है या तो फिर सब के

खिलाफ बगावत भी कर सकता है। दोनों स्थितियों में अधपतन ही होगा। समाज उसकी भावनाओं की कद्र नहीं करेगा। उसकी हत्या करने पर उतारू हो जायेगा। उससे बचने के लिए एकांत का सहारा लेना पडेगा। क्या उससे बचेगा? क्या मानव क्लोन इस दुनिया से समाप्त हो जायेंगे? ... समाज में कोई उसकी हत्या कैसे कर सकता है? ... वह भी मानव क्लोन है क्या उसकी हत्या हो सकती है? ... लेकिन कोई सिरफिरा ऐसा कर सकता है, अतः उसे किसी अज्ञात स्थान पर ही जाकर निवास करना होगा।[5] मानव क्लोन की हत्या क्या मानव और मानवता की हत्या नहीं है? इस लिए मानव क्लोन का प्रयोग परमाणु शक्ति के जौसा बन सकता है।

भविष्य में पृथ्वी पर केवल मानव क्लोन के अस्तित्व की, सिर्फ महिलाओं के रहने की संभावना को व्यक्त किया जा रहा है। वौवाहिक जीवन की जगह स्त्रियों में समलैंगिकता बढने की संभावना भी व्यक्त की जा रही है। संतान प्राप्ति का आसान रास्ता उपलब्ध होने के कारण शादी और परिवार का अस्तित्व खतरे में आने की संभावना को कोई टाल नहीं सकता। ऐसे में विज्ञान की प्रगति मानव के लिए अभिशाप बन सकती है। इसलिए संयुक्त राष्ट्र संघ और अंतरराष्ट्रीय स्वास्थ्य संघटनों के द्वारा उचित एवं उपयुक्त नियमावली के निर्माण की और उस पर सक्त अमल करने की आवश्यकता है। साथ ही वौज्ञानिक दृष्टिकोण, उसकी समझ और विवेकशील मानसिकता के निर्माण का प्रयास भी करना चाहिए। इसमें सबका हित भी है और जीवन का संगीत भी है।

लेखक का स्पष्ट मत है कि, मानव क्लोन मानवता के लिए वरदान साबित करनां हो तो सबसे पहले हमें उसके लिए उपयुक्त जमीन तौयार करनी चाहिए। अर्थात मानव क्लोन का व्यवहारिक उपयोग करने के पहले समाज में उठनेवाले संभावित प्रश्नों को लेकर दूरदृष्टि से साधक-बाधक चर्चा करनी चाहिए, जनजागरण के साथ वौज्ञानिक दृष्टिकोण और समझ विकसित करनी चाहिए। उसके साथ कुछ गंभीर प्रश्न खडे होने पर उसे हल करन के लिए कानून व्यवस्था का निर्माण भी करना चाहिए। उचित एवं अनुकूल वातावरण बनने के बाद मानव क्लोन का व्यवहार में प्रयोग करना चाहिए। तभी मानव क्लोन निसंतानों के लिए वरदान साबित हो सकता है। मानव क्लोन को लेकर हरिश गोयल जी का दूसरा एक महत्वपूर्ण विचार है कि, विज्ञान की प्रगति तो मानव के अस्तित्व, उन्नति और तरक्की के लिए अनिवार्य है ही, लेकिन उसकी प्रगति अगर मानव के अस्तित्व पर ही प्रश्न-चिन्ह खडा करती है, तो वौसी प्रगति का न होना ही बेहतर है। अर्थात् विज्ञान की प्रगति निश्चित सीमा और दिशा में होनी चाहिए। सीमाहीन और दिशाहिन प्रगति मानव विनाश का कारण बन सकती है।

संदर्भ-सूचि :

1. हरिश गोयल, मानव क्लोन (विज्ञान-कथा संग्रह), इण्डियन पब्लिशिंग हाउस 852, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपूर-302 018, प्रथम संस्करण - 2008. पृ. क्र.31.
2. हरिश गोयल, मानव क्लोन (विज्ञान-कथा संग्रह), इण्डियन पब्लिशिंग हाउस 852, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपूर-302 018, प्रथम संस्करण - 2008. पृ. क्र.44.
3. हरिश गोयल, मानव क्लोन (विज्ञान-कथा संग्रह), इण्डियन पब्लिशिंग हाउस 852, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपूर-302 018, प्रथम संस्करण - 2008. पृ. क्र.50.
4. हरिश गोयल, मानव क्लोन (विज्ञान-कथा संग्रह), इण्डियन पब्लिशिंग हाउस 852, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपूर-302 018, प्रथम संस्करण - 2008. पृ. क्र.48.
5. हरिश गोयल, मानव क्लोन (विज्ञान-कथा संग्रह), इण्डियन पब्लिशिंग हाउस 852, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपूर-302 018, प्रथम संस्करण - 2008. पृ. क्र.49.

सहायक ग्रंथ :

1. के. वि. गोपाल कृष्ण, विज्ञान और प्रौयोगिकी का मानव जाती पर प्रभाव, अनुवादक- विनीता सिंघल, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नयीं दिल्ली - 110 070, प्रथम संस्करण - 2015.
2. रघुनाथ अनंत माशलकर, वौज्ञानिक भारत का निर्माण, सामायिक प्रकाशन, नयीं दिल्ली , संस्करण - 2009.
3. पुष्पा मित्र भार्गव / चंदना चक्रवर्ती, देवदूत शौतान और विज्ञान, अनुवाद- अनुराग शर्मा, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नयीं दिल्ली - 110 070, प्रथम प्रकाशन - 2014.

Sambodhi
(UGC Care Journal)
ISSN: 2249-6661
Vol-43No.-04 (XIX) October-December (2020)

राम काव्य और राम भक्ति : परम्परा और स्वरूप

डॉ. भाऊसाहेब रा. नळे
असोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सुंदरराव सोळंके महाविद्यालय, माजलगाव. (महाराष्ट्र)

सारांश :

प्रस्तुत शोध लेख राम भक्ति काव्य की लंबी परम्परा और उसके चलते राम भक्ति के स्वरूप में आए हुए बदलावों पर अधारित है। वौसे देखा जाए तो हमें राम काव्य परम्परा का आरंभ प्राचीन काल में लिखे वेद, उपनिषद, पुराण, बौध्द जातक कथा और जौन साहित्यों में नामोल्लेख से होता हुआ दिखाई देता है किन्तु वाल्मीकि के रामायण में कही राम कथा ने जनमानस में राम के प्रति बडती जिज्ञासा को तृप्त करते हुए लोगों को राम भक्ति के साथ जोडने का सफल प्रयास किया। एक प्रकार से कहें तो उन्होंने राम काव्य के माध्यम से राम भक्ति परम्परा की नींव ही डाली। जिसपर महाकवि तुलसीदास ने रामचरित मानस की रचना के माध्यम से कलश चढाने का महान कार्य किया। इन्होंने राम को ईश्वरीय अवतार में प्रस्तुत करते हुए राम काव्य और राम भक्ति की परम्परा को जनमानस में स्थापित करने का कार्य किया है। इस कारण वाल्मीकि रामायण और तुलसीदास कृत रामचरित मानस का प्रभाव लगभग सभी परवर्तीत भारतीय राम काव्य लेखन और राम भक्ति की परम्पराओं पर कम अधिक मात्रा में हमें दिखाई देता है। उन सभी के लेखन की परम्परा और राम के बदलते स्वरूप को जानने समझने का प्रयास इस शोध लेखन का उद्देश है।

कुट शब्द : प्राचीनकाल, आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल, आधुनिककाल।

प्रस्तावना :

राम काव्य और राम भक्ति से हमारा तात्पर्य उन कवियों एवं काव्यों से है, जिन्होंने राम कथा को अपने काव्य का विषय बनाकर भारतीय जनमानस के रग रग में राम भक्ति को प्रवाहित किया। इस दृष्टि से देखा जाए तो राम काव्य परम्परा में वाल्मीकि को आदि कवि तथा उनकी रामायण को आदि काव्य माना जाता है। शायद उनके पूर्व से रामकथा की परम्परा शुरू रही होगी, किन्तु उसके लिखित प्रमाण हमें प्राप्त नहीं होते। लेकिन उसके होने का आभास जनश्रुति और मिथकों में उल्लेखित राम और सीता के चरित्र से जरूर मिलता है। इसके साथ ही चित्रकला और अभिनयकला में भी राम कथा प्रचलित होने के सुत्र देखने के लिए मिलते है। जिसके चलते रामकथा में वौविध्य का पुट हमें देखने के लिए मिलता है। यह वौविध्य राम का स्वरूप (सगुण और निर्गुण) और भावानुभूतियों में दिखाई देता है। जिसको देखते हुए स्वयं तुलसीदासने भी कहा था- 'हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता'। आगे चलकर राम कथा रचियताओं ने निर्गुण की अपेक्षा सगुण राम में विस्तार की अधिक संभावनाओं को देखा। जिसके चलते राम का पुरूषोत्तम रूप या अवतारी रूप राम कथा की मुख्य धारा में आ गया। इस प्रकार की परिपाठी का शुभारंभ वाल्मीकि के रामायण और तुलसीदास कृत रामचरित मानस से शुरू होता हुआ हम तक पहुँचता है।

रामकथा का सर्वप्रथम बृहत काव्यगुण सम्पन्न, सुगठीत और क्रमबध्द पाठ वाल्मीकि रामायण में होने के कारण उन्हें राम के समकालीन भी माना जाता है। वाल्मीकि रामायण की कथा महाभारत में भी अनेक प्रसंगों में वर्णित है। लेकिन हमें याद रखना होगा कि, वाल्मीकि रामायण में राम अलौकिक (निर्गुण) महापुरूष के रूप में तथा महाभारत में लौकिक (सगुण) रूप अर्थात अवतारी पुरूष के रूप में हमारे सामने आते है। साथ ही अगस्त संहिता, राघवीय संहिता, रामपूर्व तापनीय उपनिषद, रामोत्तर तापनीय उपनिषद, रामरहस्योपनिषद जौसे ग्रंथों में राम कथा और राम भक्ति का सुत्रपात हमें देखने के लिए मिलता है। विष्णु-पुराण, वायु पुराण, भागवत पुराण और कुर्म पुराण में भी रामकथा के अंश सर्वाधिक वौविध्यपूर्ण दिखाई देते है। अध्यात्म रामायण, आनन्द रामायण, अद्‌भूत रामायण, राघवोल्लास आदि ग्रंथों में राम को लेकर धार्मिक एंवं दार्शनिक व्याख्याएँ भी देखने के लिए मिलती है।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2249-6661
Vol-43No.-04 (XIX) October-December (2020)

रामकथा के कुछ अंश और संदर्भ बौद्ध साहित्य में भी हमें देखने के लिए मिलते है। बौद्धों ने राम को बोधिसत्व के रूप में स्वीकारते हुए अपने जातक साहित्य में स्थान दिया है। इस रूप में हम दशरथ जातक, अनामर्क जातक और दशरथ कथानम् को देख सकते है। लेकिन इन्होंने अपनी जातक कथाओं के माध्यम से राम के चरित्र और अन्य संदर्भो को विकृत ही किया है। उसमें राम, लक्ष्मण और सीता को भाई बहन के रूप में प्रस्तुत करते हुए सीता का राम के साथ विवाह लगाने जौसी घटनाओं को हम देख सकते है। कुल मिलाकर हम कह सकते है कि, बौध्दों ने राम कथा और राम भक्ति को फायदा कम नुक्सान ही जादा पहुँचाया है।

बौद्ध की अपेक्षा जौन कवि अधिक उदारमतवादी होने के कारण उनके ग्रंथों में रामकथा का वर्णन अपेक्षाकृत अधिक विस्तारपूर्वक देखने के लिए मिलता है। जौन परम्परा के अनुसार पहले विमलसूरी ने प्राकृत भाषा में पउमचरियम् (पद्मचरित) लिखा। जिसका आगे चलकर रविषेण और दौलतराम ने संस्कृत भाषा में अनुवाद किया है। तो स्वयंभू ने अपभ्रंश भाषा में इसी नाम से पउमचरियम् लिखा। जिसे हिंदी का प्रथम रामायण माना जाता है। इसके साथ गुणाढ¶ की वृहत्कथा, भुवन तुंग सूरि कृत सियाचरियम्, रामचरितम्, जिनसेन कृत आदिपुराण, गुणभद्र कृत उत्तरपुराण, हरिषेण कृत कथाकोष, पुष्दंत कृत महापुराण में राम चरित के वर्णन मिलते है। जिसमें जौन धर्म की दार्शनिक एवं धार्मिक मान्यताओं की पृष्ठभूमि पर असाधारण शक्तियों से संपन्न महापुरूष के रूप में राम को पस्तुत किया है। इन ग्रंथों में वर्णित राम कथाओं का प्रभाव आगे चलकर तुलसीदास कृत रामचरित मानस पर भी हमें दिखाई देता है। ऐसा होने के बावजूद जौन धर्म की परिपुष्टि के लिए जौन कवियों ने अपने धर्म में प्रचलित मीथक कथाओं के सहारे कुछ संदर्भो में बदलाव किए है तो कुछ मार्मिक संदर्भों को छोड दिया है।

संस्कृत साहित्य में रामकथा को अधार बनाकर नाटक और महाकाव्यों की रचना व्यापक रूप में हुई है। जिसकी शरूवात वास्तविक रूप से वाल्मीकि कृत रामायण से होती है। भास रचित प्रतिमा नाटक और अभिषेक नाटक, कालिदास प्रणित महाकाव्य रघुवंश, प्रवरसेन का रावण-वध, भवभूति प्रणित महावीरचरित नाटक और उत्तररामचरित नाटक, अनंग हर्ष मातृराज रचित उदात्तराघव नाटक, कुमारदास प्रणीत जानकीहरण नाटक, अभिनंन्दन कृत रामचरित, क्षेमेंद्र की रामायणमंजरी, चूडामणि रचित प्रसन्नराघव नाटक, मुरारी रचित अनंगराघव नाटक, रामेश्वर का बालरामायण और हनुमान्नाटक, राजशेखर का बालरामायण, जयदेव का प्रसन्नराघव और मुरारी का आनंद राघव जौसी रचनाओं में रामकथा की लंबी परम्परा हमें देखने के लिए मिलती है। जिसमें रघुवंश की परम्परा, राम की वीरता, साहस, मर्यादा और उत्तम चरित्र के पुट दिखाई देते है। जिसके द्वारा रचनाकारों ने रामकथा को नवीन रूप देकर संवेदनशील और सहृदयी समाज निर्माण करने में अपना योगदान दिया है।

हिंदी साहित्स में राम काव्य का विवेचन तुलसी को ही मध्य में रखकर किया जाता है। तुलसी के पूर्व हिंदी भाषा में राम कथा को केंद्र में रखकर अधिक साहित्य लिखा नहीं है। फिर भी हिंदी भाषा में तुलसी के पहले चंदवरदाई की पृथ्वीराज रासो का नाम आवश्य लेना चाहिए। जिसमें चंदवरदाई ने अपनी पत्नी के खातिर क्यों न हो परब्रम्हा के विविध अवतारों का वर्णन किया है। गोस्वामी विष्णुदास ने वाल्मीकि रामायण का हिंदी में अनुवाद करते हुए हिंदी भाषी जनमानस को रामकथा और रामभक्ति के साथ जोडने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। उत्तर भारत में राम भक्ति के प्रवर्तन का श्रेय संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित रामानंद को जाता है। रामरक्षा स्त्रोत उनकी महत्वपूर्ण रचना है। आगे चलकर उनके शिष्य कबीरदास ने उसको प्रसारित करने का महत्वपूर्ण काम किया है। कबीर के साथ उनके शिष्य रैदास, धन्ना, पीपा ने भी राम काव्य को आगे बढाया है। अग्रदास उर्फ अग्रअली तुलसी के समकालीन थे। वे दिन रात राम की ध्यानधारना में लीन रहते थे। उन्होंने ध्यानमंजरी, अष्टयामी, रामभजनमंजरी, उपासना बावनी, हितोपदेश और पदावली में प्रसंगानुकूल राम का ऐश्वर्य रूप और उनकी लीलाओं का वर्णन किया है। ईश्वरदास की सत्यवती कथा, भरत मिलाप, अंगद पौज, विष्णुदास की महाभारत कथा, रूक्मिनी मंगल, स्वर्गारोहण, स्वर्गारोहण पर्व और स्नेहलीला में रामकथा वर्णन दिखाई देता है। तुलसी के समय में ही प्राणचंद चौहान ने रामायण महानाटक, हदयराम ने हानुतन्नाटक और नाभादास ने अष्टयाम और भक्तमाल की रचना की है। सूरदास ने सूरसागर में राम

Copyright © 2020 Authors

कथा से संबंधित कुछ पदों की रचना की है। राम जन्म से लेकर राज्याभिषेक तक की कथा उसमें सम्मीलित है।

तुलसीदास रामभक्ति काव्य परम्परा के सर्वश्रेष्ठ कवि रहे है। वे वेद, पुराण, उपनिषद तथा विभिन्न दार्शनिक मतों के ज्ञाता थे। साथ ही जीवन में बहोत बडे बडे अघात भी उन्होंने सहे थे। जिसके बल पर उन्होंने प्रत्येक दृष्टि से रामचरितमानस को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया है। मानव व्यवहार के मार्मिक पक्षों का ऐसा विश्लेषण संसार के अन्य किसी ग्रंथों में पाना दुर्लभ है। मर्यादा, समन्वय तथा लोकमंगल की भावना का दर्शन अन्यत्र दुर्लभ है। मानवीय मूल्यों, आदर्शों, पारिवारिक-सामाजिक, राजनीतिक आदर्शो की सौद्धांतिक और व्यवहारिक निष्पत्ति के लिए तुलसीदास ने महाकाव्य, खंडकाव्य और गीति काव्य का चयण किया है। जिसमें स्वांत सुखाय और लोकमंगल की भावना का उत्कठ रूप हमें देखने के लिए मिलता है। तुलसी की बारह रचनाओं को प्रमाणिक माना जाता है। जिसमें रामलाल नहछू, रामाज्ञा प्रश्न, वौराग्य संदीपनी, पार्वती मंगल, गीतावली, बरवी रामायण, कृष्णगीतावली, दोहावली, कवितावली, विनय पत्रिका और रामचरित मानस का समावेश होता है। इन सभी रचनाओं के माध्यम से तुलसी ने रामकथा का विस्तार और रामभक्ति आन्दोलन की पताका को संपूर्ण भारत में फैलाया है।

तुलसी के परवर्ती कवियों में राम कथा पर काव्य लिखनेवालों में केशवदास का नाम सर्वोपरी है। इन्हें रीतिकाल का प्रर्वतक भी कहा जाता है। इनके द्वारा लिखी रामचंद्रिका में रामकथा तो है ही, लेकिन उसकी अभिव्यक्ति में साम्यक काव्यकला और काव्यशास्त्रीय ज्ञान का सौंदर्य भी देखने के लिए मिलता है। राम सीता का प्रेम, श्रंगार और नख-शिख वर्णन बिना किसी राग-लपेट के उन्होंने किया है। उनकी इस रचना पर रामचरित मानस, वाल्मीकि रामायण, हनुमन्नाटक और प्रसन्न राघव का प्रभाव देखने के लिए मिलता है। कवि रामनाथ ने जानकी अष्टयाम में जानकी की दिनचर्या का मार्मिक वर्णन किया है। कवि हरेफुल ने जानकी मंगल में जानकी के विवाह प्रसंग और तत्कालीन रस्मों का वर्णन किया है। श्रंगार वर्णन के परिप्रेक्ष्य में रूप वर्णन और नख-शिख वर्णन की परम्परा के सुत्रपात तो भक्तिकाल से ही शुरू हुए थे, लेकिन तुलसी की भक्ति-भावना के नीचे दबे रहे। रीतिकाल में श्रंगारीकता की भावना उचित वातावरण को पाकर विकसित होती गई। इसके संदर्भ में डॉ. प्रेमचंद माहेश्वरी का कथन धातव्य है - "उत्तर मध्य युग तक आते आते राम भक्तिभावना में से अध्यात्म का पक्ष विलुप्त हो गया और ऐहिक श्रंगारिकता शेष रह गई। व्यक्तिवादी जीवन दर्शन, श्रंगारिकता, वौराग्य, अवौज्ञानिक दृष्टिकोण तथा वर्जनाओं एवं निषधों से आबाध्द दृष्टि उत्तर मध्ययुग की विशेषता है।"[01] संपूर्ण दरबारी वातावरण सूरा, सुंदरी और विलासिता के रंग में रंगा होने के कारण उसके छींटे रामकथा में भी हमें देखने के लिए मिलते है।

इसी कडी में हम परताप साहि कृत जानुकी कौ नख-शिख और युगल शिख-नख नामक रचनाओं में जानकी के सभी अंगों के सौंदर्य का वर्णन व्रज भाषा में किया है। कवि गोप कृत रामचंद्रभरण में रामकथा प्रसंगों का छन्दबध्द उपयोग किया है। सरदार कवि कृत रामभूषण दोहा छंद में लिखा है। जिसमें अलंकारों के लिए राम के यश और चरित के विभिन्न पक्षों का चयण किया है। वौष्णव कवि भगवानदास कृत रामरसायन छंद शास्त्र का ग्रंथ है। महाराजा विश्वनाथ सिंह रचित आनन्द रघुनन्दन नाटक, संगीतरघुनन्दन, आनन्द रामायण, रामचंद्र की सवारी नामक रचनाएँ भी उपलब्ध होती है। कवि सेनापति ने वाल्मीकि रामायण और तुलसी कृत रामचरित मानस का प्रभाव ग्रहण करते हुए कवित्त रामायण नामक रचना लिखी है। माधवदास चारण कृत अध्यात्मरामायण, रामरासो, हृदयराम कृत हनुमान्नटक, नरहारी वापट कृत पौरूषेम रामायण, लालादास कृत अवध विलास, परशुराम देव कृत दशावतार चरित, रघुनाथ चरित, माधवदास जगन्नाथी कृत रघुनाथ लीला जौसी रचनाओं को भी रामकाव्य परम्परा में महत्वपूर्ण स्थान मिलता है। कूलमिलाकर हम कह सकते है कि, रीतिकालीन रामकथा और रामकाव्य में रसिकता और श्रंगारिकता का भाव प्रमुख रूप से हमें देखने के लिए मिलता है।

आधुनिक काल का रामकथा साहित्य बहुआयामी है। इस काल में अनेक विधाओं में रामकथा संबंधी विविधायामी लेखन हुआ है। रामचरित उपाध्याय की रामचरित चिंमामणि, रामनाथ ज्योतिषी की

Copyright © 2020 Authors

205

श्रीराम चन्द्रोदय, राष्ट्रिय कवि मौथिलीशरण गुप्त का साकेत, पंचवटी, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध का वैदेही वनवास, बलदेव मिश्र का साकेत संत, बालकृष्ण शर्मा नवीन का उर्मिला, निराला की राम की शक्ति पूजा, नरेश मेहता कृत संशय की एक रात, केदार नाथ मिश्र कृत कैकयी, जगदिश् गुप्त की शम्बूक, बलदेव मिश्र की रामराज्य आदि रामकथा के मानक ग्रंथ माने जाते है। इन रचनाओं में रचनाकारों ने आधुनिक संदर्भों में रामकथा की चर्चा करते हुए उसके महत्व को अधोरेखित किया है। भक्तिकाल में तुलसी के राम मर्यादावदी थे, वे रीतिकाल तक आते आते लिला पुरूषोत्तम हो गए। वही राम आधुनिक काल में स्वतंत्रता के संग्राम में देशवासियों के रग रग में प्राण फँकने लगे। वास्तविक रूप से दलित, उपेक्षित, वंचित और दबे कुचले वर्ग के नायक बन गए। इस संदर्भ में लल्लन प्रसाद व्यास ने अपने लेख में लिखा है- "समय परिवर्तीत हुआ और भारत के मुक्तिसंग्राम में राम पतीत पावन, लोकनायक मान्य हुए। स्वाधिनताकाल में राम आत्म चेतना के रूप में विराजमान है। वे पुरूषार्थी हैं और उनके इस रूप की अभिव्यक्ति पुरूषोत्तम राम नामक ग्रंथ में हुई है। राम काव्य ने न्याय के दिक्विजय के लिए चतुर्दिक यात्रा की है।"[02] इस काल की रामकथाओं की तीन प्रमुख विशेषताएँ दिखाई देती है। एक, इन कथाओं में अवतारवाद को कम महत्व दिया है। राम का मानवीकरण देखने के लिए मिलता है। दोन, रामकथा में भक्तिकालीन धार्मिक भावना और रीतिकालीन श्रृंगारिकता के स्थान पर नवीन सामाजिक तथा राजनीतिक आदर्श प्रस्तुत किए है। तीन, पूर्ववर्ती रामकाव्य के उपेक्षित पात्रों को नायक, नायिका के रूप में प्रस्तुत करने पर बल दिया है। जिसमें मानवीय चिंतन के नए आयाम हमें देखने के लिए मिलते है।

निष्कर्ष:

रामकथा की लंबी परम्परा चलती आ रही है। जिसका आरंभ वेद, उपनिषद, महाभारत, संहिता और नाथ तथा बौद्ध साहित्य में उल्लेखित पात्र और कुछ कथा-सुत्र से होता है तथा हिंदी भाषा में लिखी रामकथा का प्रेरणा स्रोत वाल्मीकि रामायण और तुलसी का रामचरित मानस रहा है। पूर्व मध्यकालीन हिंदी रामकथा साहित्य पर तुलसीदास का एक प्रकार से एकाधिकार होने के कारण श्रृंगारिकता की भावना दबी की दबी रह गई। जो उचित वातावरण को पाकर उत्तर मध्यकाल में श्रृंगारीकता के रंग में रंगती गई। रीतिबध्द, रीतिसिध्द और रीतिमुक्तक काव्य के रचियताओं में इस तरह की श्रंगारिकता रामकथा में देखने के लिए मिलती है। आधुनिक काल में नए संदर्भों के अनुसार रामकथा को यथार्थ की भाव-भूमि पर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

संदर्भ-ग्रंथ:

01. डॉ. प्रेमचंद माहेश्वरी, हिंदी रामकथा का स्वरूप और विकास, पृ. क्र. 53.
02. लल्लन प्रसाद व्यास, रामकथा की दिव्य विजय यात्रा, कादंबिनी पत्रिका, अक्तुबर 1973, पृ. क्र. 80.

सहायक ग्रंथ :

1. प्रो. रामकिशोर शर्मा, हिंदी विषय में उच्च शिक्षा संकाय के लिए शिक्षण में वार्षिक पुनश्चर्या पाठ¶क्रम, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा, (अर्पित) 2019, ई-पाठ¶ सामग्री।
2. प्रो. रामकिशोर शर्मा, हिंदी साहित्य का समग्र इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहावाद।
3. डॉ. माधव सोनटक्के, हिंदी साहित्य का इतिहास, विकास प्रकाशन, कानपुर।
4. डॉ. नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबौक्स, नौएडा।

Copyright © 2020 Authors

'RESEARCH JOURNEY' International E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) - 6.625 (2019),
Special Issue -259 (B) 'वैश्विक परिदृश्य में भारतीय भाषाएं, संस्कृति और साहित्य की पारस्परिकता'
Peer Reviewed Journal
E-ISSN : 2348-7143
Jan. 2021

'जूठन' आत्मकथा में दलित विमर्श

शोध निर्देशक
डॉ. बी. आर. नळे
हिंदी विभाग
सुंदरराव सोळंके महाविद्यालय, माजलगाव.

शोधार्थी
अमृता अनिल तोर
सुंदरराव सोळंके महाविद्यालय, माजलगाव.
मो. ९४२१६४२८८५
E-mail : tauramruta@gmail.com

इक्कीसवी सदी में हिंदी साहित्य में दलित आत्मकथाएँ महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। यह विधा अपने व्यक्तिगत भोगे हुए अनुभव को ही बयाँ नहीं करती बल्कि समाज मे हो रहे जातिगत भेदभाव का दस्तावेज भी प्रस्तुत करती है। दलित साहित्यकारों ने इन आत्मकथाओं के माध्यम से अपने ऊपर होते आ रहे सदियों के शोषण को समाज के सामने लाने का प्रयास किया है। हिंदी दलित साहित्य ऐसी सच्चाई को लेकर उभरा, जो भोगा हुआ सच था। वह साहित्य न मनोरंजन था न परम्परागत रूप में शिक्षा देनेवाला। वह एक ऐसा सच था, जो सदियों से पन्नों की नीचे घटित हो रहा था। जिसने आजीवन घृणा, उपेक्षा अपमान, दुत्कार, धित्कार, डाट-डपट, बदनामी, पीड़ा गरीबी, दरिद्रता का सहा था।

भारतीय समाज में विशेष रूप में दलित समाज सदियों से अछूत रहा है। दलित व्यक्ति का लेखक मुख्य धारा के समाज से पीड़ा दर्द, जातिभेद, शोषण एवं अत्याचार को सहा था। उसी यथार्थ को आज इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य में आत्मकथा के माध्यम से सब के सामने प्रस्तुत करने लगा है। वर्तमान में दलित साहित्य में आत्मकथाएँ सबसे अधिक लिखी गई। जिनमें प्रमुख रूप से अपने अपने पिंजरे, दोहरा अभिशाप, शिकजे का दर्द, तिरस्कृत, झोपटी से राजभवन आदि। लेकिन ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूठन' दलित साहित्य में अपना विशेष महत्त्व रखती है। ओमप्रकाश वाल्मीकि अपनी आत्मकथा के संदर्भ में लिखते हैं कि - " इन अनुभवों को लिखने में कई प्रकार के खतरे थे। एक लंबी जद्दोजहद के बाद मैं ने सिलसिलेवार लिखना शुरू किया। तमाम कष्टों, यातनाओं, उपेक्षाओं, प्रताडनाओं को एक बार फिर जीना पड़ा। उस दौरान गहरी मानसिक यंत्रणाएँ मैं ने भोगी। स्वयं को परत-दर परत उधेडते हुए कई बार लगा कितना दुःखदायी है यह सब। कुछ लोगों को यह अविश्वसनीय और अतिरंजना पूर्ण लगता है।"[१] आत्मकथा लिखते समय लेखक एक तरह से उन परिस्थितियों, यादों, जख्मो, दर्द, पीड़ा और अपमानों को दोबारा जीता है। उसका दोबारा एहसास करना बड़ा ही कष्टप्रद होता है। वह अपनी आत्मकथा के माध्यम से दलितो के वेदना को स्वर देता है। प्रस्तुत आत्मकथा में लेखक के बचपन से लेकर युवावस्था तक जीवन की वेदना और संवेदना की कटुपूर्ण अनुभूतियाँ हैं।

लेखक का स्पष्ट मानना है कि, जिन लोगों की आर्थिक स्थिती अच्छी है, उन्होंने ही गरीबों को सबसे अधिक लूटा है। इसी बात पर जोर देते हुए वे अपनी आत्मकथा में लिखते हैं- "सवर्णों के मन में दलितों शूद्रों के लिए इतनी घृणा क्यों है? पेड-पौधे, पशु पक्षियों को पूजनेवाला हिन्दु दलितों के प्रति इतना असहिष्णु क्यों है?"[२] सवर्णों द्वारा दलितो का सदियों से ही शोषण होता रहा। हिन्दू धर्म में नदी, पेड, पौधे, गाय, सांप आदि की पूजा की जाती है। इन सभी को स्थान और सन्मान दिया जाता है। लेकिन हिन्दू धर्म में दलित, शुद्र, अछूत मनुष्य को कोई स्थान नहीं कोई सन्मान नहीं। मिट्टी से बने पुतलो को भी भगवान मानकर पूजा की जाती है। मगर दलित शुद्र को मनुष्य तक नहीं मानते। उनके साथ पशुओं जैसा बर्ताव किया जाता है।

लेखक जब भी स्कूल, कॉलेज या दफ्तर या दोस्त के घर जाते है वे तो सबसे पहले उनकी जाति पूछी जाती थी। जब लेखक जाति "दलित" बताते थे तो उनकी तरफ राव घृणा भरी नजरों से देखते थे। लेखक की पत्नी भी "वाल्मीकि" उपनाम को अपने नाम के आगे लगाने से इन्कार करती हुए कहती थी अगर हमारा बच्चा हुआ तो मैं उसके नाम के साथ "वाल्मीकि" उपनाम कभी नहीं लगाऊंगी। इसी प्रकार उपनाम से ही जात का पता चलता था। इसी संदर्भ में लेखक लिखते

है कि - "जाति मालूम होते ही सब कुछ बदल जाता है। फुफकारती दलित होने की पीड़ा। चाकू की तरह नस-नस में उतर जाती है। गरीबी, अशिक्षा, छिन्न-भिन्न दारुण जिंदगी दरवाजे के बाहर खड़े रहने की पीड़ा भला अभिजात्य गुणों से संपन्न सवर्ण हिन्दू कैसे जान पाएंगे?" अपनी आत्मकथा के माध्यम से लेखक सवर्ण के द्वारा होनेवाले व्यवहारों की तरह उंगली उठाते हुए सवाल उठाते हैं की सवर्ण को दलितों की पीड़ा, अभाव, गरीबी, भुखमरी, और उपेक्षा के बीच होनेवाली पीड़ा को वे अगर जान पाए तो आज हमारे जीवन का नया अध्याय शुरू हो जाता है। जिसमें हम समाज के मुख्यधारा में आ जाते। अपने हित और अधिकार की बात करते हैं। लेकिन उन्होंने कभी हमारी पीड़ा न समझी न कभी उसे समझने का प्रयास किया।

जब गाँव में शादी या उसके जैसे अनेक सार्वजनिक समारोह होते थे तो उसमें अपने पेट की भूख मिटाने के लिए घंटों इंतजार करने के बाद जूठा खाना मिल जाता था। ऊपर से उसके बदले में तमाम काम भी करने पड़ते थे और गालियों को भी सुनना पड़ता था। इससे विदारक और भयावह स्थिति तथा जीवन की त्रासदी और क्या हो सकती है। दिन में एक बार चूल्हा जलना अर्थात एक समय का खाना और बाकी समय में सिर्फ पानी लेकर पड़े रहने के लिए विवश करनेवाली यह व्यवस्था कैसे महान और मानवीय हो सकती है? इस पर भी आत्मकथाकार चिंतन करते हुए अपना आक्रोश व्यक्त करता है। जो उचित एवं जायज भी है। रोटी की कीमत वही जानता है, जो उसे पाने के लिए संघर्ष करता है। लेखक की आधी उम्र तो रोटी को पाने के लिए ही संघर्षरत रही है। इस कारण उससे भला रोटी की कीमत और कौन जान सकता है? वे रोटी की कीमत बताते हुए अपनी आत्मकथा में लिखते हैं- "मैं ने बचपन से रोटी को बहुत मूल्यवान वस्तु माना है। इसे बरबाद करनेवाले लोग मुझे अपराधी लगते थे।" लेखक अपने बचपन के बारे में कहते हैं की कभी-कभी तो उबले चावल के पानी को पीकर ही काम चलाना पड़ता था। इस उबले चावल के पानी को मांड कहते थे। लेखक के लिए यह मांड किसी दूध से कम ना था।

लेखक स्कूल के प्रसंग को बताते हुए लिखते है कि जब मास्टर द्रोणाचार्य ने भूख से तड़पते अश्वत्थामा को दूध की जगह आटापानी में घोलकर पीलाया था। यहाँ प्रसंग द्रोणाचार्य की गरीबी को दर्शाने के लिए महाभारतकार व्यास ने रचा था। इस प्रसंग को सुनते ही लेखक खड़े होकर मास्टर साहब से सवाल करते हैं- "अश्वत्थामा को तो दूध की जगह आटे का घोल पिलाया गया और हमें चावल का मांड। फिर किसी भी महाकाव्य में हमारा जिक्र क्यों नहीं आया?" इस प्रकार लेखक अपनी कक्षा में प्रश्न उठाता है कि, महाभारत में द्रोणाचार्य की गरीबी का चित्रण है। लेकिन हम दलितों की पीड़ा, दर्द, शोषण, अपमान, उपेक्षा का जिक्र तक कोई नहीं करता। यह हमारी जाति पर कितना बड़ा अन्याय है।

लेखक को स्कूल में पढ़ते समय अनेक यातनाओं का सामना करना पड़ा था। लेखक को कक्षा के बाहर बैठना पड़ता था। उनके जाति के कारण उनका कोई दोस्त नहीं बन पाता था। अध्यापक उनकी ओर कोई ध्यान नहीं देते थे। बल्कि उनसे काम करवाते थे इसी संदर्भ में लेखक लिखते हैं कि - "हेटमास्टर के आदेश पर मैं ने स्कूल के कमरे, बरामदे साफ कर दिए। तभी वह खुद चलकर आए और बोले इसके बाद मैदान भी साफ कर दे। लंम्बा-चौड़ा मैदान मेरे वजूद से कई गुना बड़ा था। जिसे साफ करने से मेरी कमर दर्द करने लगी थी।" इस प्रकार के काम अध्यापक दलित बच्चों से करवाते थे। उनके प्रति उपेक्षा का भाव रखते थे। अच्छे नंबर लाने पर भी कभी सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। लेखक हमेशा अपने प्रति उपेक्षा, अपमान को देखकर दुःखी होते थे, और अपने जाति के प्रति मन में हीन भावना महसूस करते थे। अपनी पढ़ाई के लिए उन्हें संघर्ष करना पड़ा। लेखक अनेक समस्याओं का सामना करते हुए अपनी पढ़ाई पूरी करते है। लेखक को देखकर बस्ती के बच्चे मनसे पढ़ते हैं। लेकिन सवर्णों हिन्दू उन्हें पढ़-लिखने से रोकते थे। इस कारण लेखक अपनी मन की व्यथा को प्रस्तुत आत्मकथा में रेखांकित करते हुए लिखते हैं कि- "दलित पढ़-लिखकर समाज की मुख्यधारा से जुड़ना चाहते हैं, लेकिन सवर्णों, (?) उन्हें इस धारा से रोकता है। उनसे भेदभाव बरतता है। अपने से हीन मानता है। उसकी बुद्धिमता, योग्यता, कार्यकुशलता पर सन्देह व्यक्त किया जाता है। प्रताड़ित करने के तमाम हथकंडे

210

E-ISSN :
2348-7143
Jan. 2021

अपनाए जाते हैं इस पीड़ा को वही जानता है। जिसने इसकी विभीषिका को नश्तर अपनी त्वचा पर सहे हैं। जिसने जिस्म को सिर्फ बाहर से ही घायल नहीं किया है अंदर से भी छिन्ना-छिन्ना कर दिया है।"[7] दलित पढ़-लिखकर समाज की मुख्यधारा से जुड़ना चाहते थे। सवर्णों दलितों को हमेशा शिक्षा से दूर रखना चाहते थे। सवर्णोंवादी समाज को डर था कि अगर दलित पिछड़े लोग पढ़-लिखकर अपनी अधिकार के प्रति जागरूक होंगे। वे अपना अधिकार पाने के लिए आवाज उठाने लगेंगे। इन सब प्रश्नों का जवाब मांगती उनकी आत्मकथा जीवन में भोगे हुए यथार्थ को समाज के सा मने लेकर आते हैं।

इस प्रकार "जूठन" यह आत्मकथा सच्चे अर्थों में "दलित विमर्श" को हमारे सामने रखती है। दलितों को आगे बढ़ने उन्हें कार्यरत संघर्षरत रहने की चेतना देती है। आत्मकथा के पात्र अन्याय से रोते बैठने के बजाए उसका डटकर विरोध कर अपने मंजिल तक पहुंचते हैं। इसी कारण "जूठन" आत्मकथा बेजोड बन चुकी है।

संदर्भ :

१. ओमप्रकाश वाल्मीकि - जूठन (पहला खंड) राधाकृष्ण प्रकाशन, पहला संस्करण १९९७, पृष्ठ क्र. ९-१०.
२. वही पृष्ठ क्रमांक १६३.
३. वही पृष्ठ क्रमांक १६४.
४. वही पृष्ठ क्रमांक १०३.
५. वही पृष्ठ क्रमांक ३४.
६. वही पृष्ठ क्रमांक १५.
७. वही पृष्ठ क्रमांक १५५.

'गुलमोहर की छांव तले धुप' के बहाने

प्रा. डॉ. बी. आर. नळे
हिंदी विभाग,
सुंदरराव सोळंके महाविद्यालय, माजलगाव.

इक्कीसवीं सदी के दलित साहित्य में साहित्यिक विधा, आशय, विषय और अभिव्यक्ति के स्तर पर काफी परिवर्तन आया है। इस कारण आज का दलित साहित्य आशय-विषय के स्तर पर विभिन्न रूपों और प्रकारों में पाठकों के सामने आ रहा है। जिसके माध्यम से दलित साहित्यकार गाँव की सीमा के बाहर रहनेवाली सभी जातियाँ, भूमिहीन, मजदूर, श्रमिक जनता, और यायावार जातियों के जनजीवन के साथ जुडी समस्याओं की अभिव्यक्ति के साथ अनेक विद्रोह तथा विरोध को खुलकर अभिव्यक्त करने लगा है। जिस समाज व्यवस्था ने हजारों सालों से भेद-भावकर दलित प्रतिभावों को सचेतन रूप से मानसिक विकलांग बनाकर आंतरजातीय सहयोग, सद्भाव और सहअस्तित्व की भावना की बजाय द्वेष, तनाव और सामाजिक विघटन की आग में ढकेल दिया था। उस व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह एवं आक्रोश के साथ रचनात्मक परिवर्तन के लिए आज का दलित साहित्य लिखा जा रहा है।

आज का दलित साहित्य सजग होने के कारण आधुनिकता बोध से युक्त बनता जा रहा है। स्वजनों की अभिव्यक्ति के साथ देश तथा राष्ट्रप्रेम के प्रति प्रतिबद्धता का निर्माण होने लगा है। धर्म तथा जातिगत विसंगतियों पर प्रहार करता हुआ बंधन एवं शोषण मुक्त स्वस्थ समाज के लिए लिखा जा रहा है। इस प्रकार व्यापक दृष्टिकोण को सामने रखकर लिखनेवाले दलित साहित्यकारों में से एक हैं - 'इन्द्र पवार'। इनका १५ अगस्त २००६ में प्रकाशित गीत गजलों का संकलन 'गुलमोहर की छांव तले धुप' श्रेष्ठ उदाहरण हैं। वें अपने संकलन की भूमिका में ही लिखते है - " शब्द को साधना मिल जाये यही बहुत है, भक्ति को भावना मिल जाये यही बहुत है। चारों ओर फैले झूठ के माहौल में सत्य को व्यंजना मिल जाये यही बहुत है।"[1]

आज का दलित साहित्य स्वानुभूति की भूमि से उपर उठकर समग्र देशवाशियों की चिंता में लगा हुआ है। वर्तमान युग में जो नीतियाँ सरकार के द्वारा निर्धारित की जा रही है, वह हितकारी न होकर देश और देशवाशियों को गुलामी की ओर ले जाने लगी है। आज देश के अंतर्गत दहशतवाद, प्रांतवाद, जातिवाद निर्माण करके समाज की एकसंगता को विकलांग बनाया जा रहा है। भूमंडलीकरण, विदेशी आक्रमण और अंतर्गत कलह के बीच पारतंत्र्य का एहसास आम आदमी करने लगा है। इसी गुलामी और पारतंत्र्य की कल्पना से ही साहित्यकार बेचैन होकर लिखता है - " स्वराज अमानत करना जतन। शहिदों को कोटी कोटी नमन।। साहित्यकार को अपने से जादा भारतीय समाज और उसके स्वातंत्र्य की चिंता हमें दिखाई देती है।"[2]

आज समग्र व्यवस्था और उसे चलानेवाले लोग स्वार्थी और नपूसक बनकर अंधाधूंद दरबार चला रहे है। उनकी कथनी और करणी में अंतर आ गया है। इस कारण आज अस्पताल में जल्लाद और पुलिस थाने में शैतान... आदालतों में हत्यारे और दुकानों में लूटेरे... कार्यालयों में दगाबाज और खेतों में जमाखोर.... उद्योगों में खून चोर और धार्मिक स्थलों पर आतंकवादी एवं सत्ता में माफिया बैठे हुए दिखाई देते है। इनकी धूर्त एवं स्वार्थी नीतियों ने आम आदमी का जीना और मरना दोनों बराबर कर दिया है। इन लोगों ने सत्य का विध्वंस करके असत्य का बाजार स्थापित करना शुरू किया है। इसी असत्य के बाजार में कवि इंद्र पवार एक वचनी और सत्य वचनी राम की तलाश करता हुआ

भटकता दिखाई देता है। 'अय जिंदगी के मुसाफिर' नामक कविता में कवि अपनी तलाश करता हुआ लिखता है - "आजकल दर शहर में ... रावन दसमुख वाले, / वचन पर प्राण-बाजी, दे दें वह राम कहाँ।"[3]

आजादी के बाद देश का समांतर विकास करने के लिए पं. नेहरू ने औद्योगिकीकरण पर जोर दिया था, लेकिन आजादी के सांठ साल बाद भी समांतर विकास हो नहीं पाया। उलटे उद्योगधंदों ने ग्रामीण छोटे मोटे व्यवसाय को नष्ट ही कर दिया। नतिजन ग्रमीण परिवेश के लोगों के जीवन में रोजी रोटी के लिए भटकन आ गई। पर्यावरण और उद्योगों के असमतोल विकास ने भारत के वैभव और संपन्नता को नष्ट कर मुठ्ठीभर लोगों के लिए शायनिंग इंडिया की निर्मिती की। आज बुनियादी चीजों की पुर्ति के लिए आम आदमी का जीवन संघर्ष अधिक तेज हो गया है। हमारे देश की सरकार इन समस्याओं को मिटाकर समांतर विकास करने की बजाय विरोधाभास निर्माण करने पर अधिक जोर देने लगी है। कवि ने ' शोभा यात्रा ' और ' आज मेरे देश में ' नामक कविता में इसकी अभिव्यक्ति की है। ' शोभा यात्रा ' के अंतर्गत रोजी रोटी के संघर्ष को अभिव्यक्त करते हुए कवि इंद्र पवार लिखते है - " चबाने के लिए रोटी के टुकडे चंद, / शहर दर शहर घुम रहे है हम।"[4]

आज का युग बाजारीकरण का है। इस युग ने भोग विलासी जीवन पध्दति को जन्म दिया है। पहले बाजार में बुनियादी चीजों की खरीद-फरोख्त का कारोबार होता था। लेकिन आज उसी बाजार में इन्सान की खरीद फरोख्त का व्यापार होने लगा है। इस व्यापार की पूँजी ' प्रेम ' बन गई है। आज प्रेम के नाम पर ठगने, लूटने और हत्या करनेवाले व्यापरियों का ही बोलबाला बाजार में है। वे जाति, धर्म, प्रांत और वर्ग का व्यापार करने लगे है। कवि ने इसी इन्सान की खरीद फरोख्त पर ' कसम प्यार की ', ' महोब्बत इन्सान की ' और ' जिन्दगी मुहब्बत ' को नामक कविता में चिंता जताई है। ' कसम प्यार की ' नामक कविता में दारूण यथार्थ की अभिव्यक्ति करते हुए कवि लिखता है - " बिकता यहाँ इन्सान और, मंदिर में भगवान.... / पिया प्यार ना सही, प्यार व्यापार कीजिए।"[5]

आज हमारे देश की सबसे बडी समस्या महंगाई और भ्रष्टाचार की बन गई है। इस समस्याओं की मार ने आम आदमी के सपनों, इच्छाओं और अकांक्षाओं को छीनकर उसके जीवन को भग्न कर दिया है। वह अजीबो-गरीबों की परेशानी और बेचैनीयों से गुजरने लगा है। मंहगाई और भ्रष्टाचार की विशैली हवाओं ने उसकी जिन्दगी को शापित कर दिया है। आज न अमीर सुखी है, न गरीव। बाजारवाद और उपभेक्तावाद ने सबकी खुशियों को छीनकर पुतलों की तरह बना दिया है। वह पल प्रतिपल मर मर के जीने के लिए विवश हो गया है। सत्ता, शासन, प्रशासन का मुखौटा पहनकर दलील करनेवाले लोगों ने आम आदमी की रीड तोड दी है। ' छलना ', ' तुम मुझको पुकार लो ' नामक कविताओं में इसकी ही अभिव्यक्ति है। ' आजादी की जिन्दगी में ' दारूण यथार्थ को व्यक्त करते हुए कवि लिखते है - " महंगी मार से, तेज तलवार से / लगे कटा कंबंध ... यहाँ हर बशर है ...।"[6]

आज सत्ता में बैठे लोग अपनी सत्ता को कायम रखने तथा विरोधी सत्ता को हथियाने के लिए तरह तरह के षडयंत्र, हत्यकण्डे और दांव-पेंच अपनाकर देश की एकता एंव अखण्डता को छीन्न भिन्न करने लगे है। दोनों ओर से जनता में संभ्रम और विभ्रम का वातावरण निर्माण करके मेवा मीठाई खाने लगे है। देश को लूटकर बरबाद करने लगे है। इसी की वजह से नारे और घोषणाओं के आगे न तो कोई आन्दोलन जा रहा है, न धरणा, न मोर्चा, न कोई नीति निर्धारण। इसके केंद्र में बैठे लोगों का उद्देश्य केवल शवाब, शबाब और कबाब में रातें रंगीन करना मात्र बन गया है। इस कारण इनकी ओर से क्रांति और परिवर्तन की कामना करना बेकार है।

आज समग्र देश में संवेदनहीनता, भावनाहीनता, दिशाहीनता और मोहभंगता की लहर फैलती जा रही है। आम आदमी जीवित मृत्यु की यातनाओं को भुगतने के लिए विवश हो रहा है। उसके चारों ओर विरोध, विरोधाभास, घृणा, नफरत, आक्रोश, डर, भय और आतंक का माहौल फैलता जा रहा है। ऐसे वातावरण में केवल आम आदमी के प्रति प्रतिबद्धता का निर्वाह साहित्यकार ही करने लगा है। वही अपनी लेखनी के माध्यम से विचारों के बारूद जनमानस में फोडकर क्रांति और नव चेतना की लहर उत्पन्न करने लगा है। कवि इन्द्र पवार अपनी कटीबध्दता और कवि कर्म की निष्ठा को बताते हुए ' मोती सरते है ' नामक गजल में लिखते है - " लेकर दर्द दुनिया का, हम खुशियाँ भरते है... / दुनिया लोभी चाहें - चाँदी सोना मोती... / इन्द्र गजल कहने में ... शेर, मोती झरते हैं।"[7]

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि, इक्कीसवीं शती का दलित साहित्य समग्र देशवासियों की चिंताओं में डुबकर नवक्रांति की लहर को पैदा करने लगा है। गीत गजलकार इन्द्र पवार ने देश के अंतर्गत रहनेवाले आम आदमी का मोहभंग, मंहगाई की मार, किसानों की आत्महत्या, सत्ता-शासन-प्रशासन का निष्ठुरलेपण एवं कर्महीनता, रोजी रोटी को भटकन, स्त्री आन्दोलन की असफलता, युवाओं की भटकन जैसे कई प्रश्नों को बखूबी से प्रस्तुत किया है। कवि का आरंभ में नैराश्य और मोहभंग का स्वर भले ही हमें दिखाई देता हो, लेकिन अंत में नवचेतना और नवक्रांति की लहर पैदा करने का अशावाद उस पर हावी हो जाता है। यह संकलण यथार्थ की भावभूमि से उपजा एक गुलदस्ता है, जिसकी अलग अलग छटाएँ आम आदमी के जीवन में नवचैतन्य और नवक्रांति का बीजारोपण करती है।

संदर्भ सुचि :

१. इन्द्र पवार, ' भूमिका ', गुलमोहर की छांव तले धुप - पृष्ठ ०४.

२. इन्द्र पवार, ' शहिदों के नाम ', गुलमोहर की छांव तले धुप - पृष्ठ १३.

३. इन्द्र पवार, ' अय जिंदगी के मुसाफिर ', गुलमोहर की छांव तले धुप - पृष्ठ १८.

४. इन्द्र पवार, ' शोभा यात्रा ', गुलमोहर की छांव तले धुप - पृष्ठ २१.

५. इन्द्र पवार, ' कसम प्यार की ', गुलमोहर की छांव तले धुप - पृष्ठ २५.

६. इन्द्र पवार, ' आज की जिंदगी ', गुलमोहर की छांव तले धुप - पृष्ठ २९.

७. इन्द्र पवार, ' मोती सरते है ', गुलमोहर की छांव तले धुप - पृष्ठ ३६.

■■■

३. देवेंद्र मेवाडी की विज्ञानकथा 'अंतीम प्रवचन'

प्रा. डॉ. बी. आर. नळे
हिंदी विभाग, सुंदरराव सोळंक महाविद्यालय, माजलगाव, तहसिल-माजलगाव, जिला-बीड.

वरिष्ठ विज्ञान कथाकार श्री. देवेंद्र मेवाडी की 'अंतीम प्रवचन' नामक विज्ञान कथा विज्ञान साहित्य में अपना विशेष महत्व रखती है। उन्होंने इस कथा के माध्यम से एक तरफ 'मानवी क्लोन' की वैज्ञानिक विधि को समझाकर पाठक की जिज्ञासाओं का समाधान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है, तो दुसरी तरफ वैज्ञानिक संभावनाओं के दुरूपयोग से निर्माण होनेवाले मानवीय मूल्यों के प्रश्नों पर भी विचार किया है। साथ ही आज के वैज्ञानिक युग में अवैज्ञानिक घटनाओं की बढ रही पुनरावृत्ति, विज्ञान और अध्यात्म का बाजार, व्यक्ति पूजा का बढता महत्व और उन सबके बीच झूलसते भारतीय समाज के अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नों पर चिंतन प्रस्तुत करते हुए वैज्ञानिक दृष्टिकोन की आवशकता और वैज्ञानिकों की भूमिका पर प्रकाश डालने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

'भ्रूण विज्ञान' की चौंकानेवाली अनेक खोजों ने तो संपूर्ण मानव जाति को सून्न कर दिया है. उन खोजों में से एक 'मानवी क्लोन' अर्थात हु-ब-हु मानव की प्रतिकृति या प्रतिलिपि बनाने का वैज्ञानिकों का प्रयास। इस प्रकार के 'मानवी क्लोन' की वजह से आनुवांशिक चिकित्सा आसान हो सकती है। पार्किंस और अल्झीमर जैसे गंभीर रोगों से मानव को छुटकारा मिल सकता है। साथ ही क्लोन के द्वार शरीर के महत्वपूर्ण अंग विकसित करके अवयव प्रत्यारोपण का काम आसान हो सकता है। मन चही संतान (सुंदरता, सुडैलता, बौध्दिक क्षमता को पूर्व निर्धारित करके) को प्राप्त करना भी संभव हो सकता है। निसंतान दम्पति को मातृ-पितृत्व का सुख और आनंद भी मिल सकता है। इतनी सारी संभावनाओं के बावजूद भी उससे निर्माण होनेवाले पारिवारिक और सामाजिक प्रश्न, मानव और मानवीय मूल्यों के प्रश्न, अस्थिरता और असुरक्षितता के प्रश्न आदि को देखते हुए 'संयुक्त राष्ट्र संघ' और 'आंतरराष्ट्रीय स्वास्थ्य संघटन' के द्वारा मानवी क्लोन के पूर्ण विकास पर प्रतिबंध लगाया है। साथ ही उसपर होनेवाले अनुसंधान कार्य (कुछ देशों को छोडकर) को अपनी निगरानी में रखा है।

विज्ञान कथाकार श्री. देवेंद्र मेवाडी की चिंता इसी मानवी क्लोन को लेकर है। क्योंकि आज के वैज्ञानिकों ने पैसा और सफलता पाने के लिए नीजी प्रयोगशाला में गुप्त रूप से इस प्रकार के मानवी क्लोन को विकसित करने में सफलता प्राप्त की तो क्या होगा? क्योंकि मानव क्लोन से विकसित संतान किसी व्यक्ति की प्रतिलिपि तो हो सकती है, लेकिन उसका वर्तण पूर्णत: बाहरी परिस्थिति, परिवेश और संस्कारों पर निर्भर करेगा। हमशकल होने का फायदा अगर किसी ने उठाया तो? साथ ही खून का रिश्ता किसीसे न होने के कारण उसकी न माता होगी, न पिता, न भाई होगा, न बहन। ऐसे में स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में विकसित प्रतिलिपि के फायदे कम नुकसान जादा होने की संभावना अधिक होगी। लेखक ने इसी भावभूमि पर संपूर्ण रूप से प्रयोगशाला में विकसित मानवी क्लोन का प्रयोग

अध्यात्मिक और सामाजिक क्षेत्र में कितने गंभीर प्रश्न निर्माण कर सकता है, उसकी कल्पना करते हुए भविष्यकालीन समस्याओं से मानव समाज को सचेत करने का प्रयास किया है।

प्रस्तुत विज्ञानकथा में कथाकार वैज्ञानिकों की नौतिकता को लेकर अधिक चिंतीत दिखाई देते है। उनके अनुसार 'मानवी क्लोन'के संदर्भ में जुडी महत्वपूर्ण समस्या है, वैज्ञानिकों की नैतिकता। भले ही अनेक देशों ने इस पर पाबंदी लगा दी हो किन्तु प्रसिध्दि, पद, पैसा और प्रतिष्ठा पाने हेतु तथा साधन और सुविधा उपलब्ध होने के बाद वैज्ञानिक नए शोध के नाम पर गुप्त रूप से मानवी क्लोन तैयार नहीं करेंगे इसका क्या भरोसा है? महत्वकांक्षी और अभावग्रस्त वैज्ञानिक साधन, सुविधा और मौका मिलते ही अपनी सारी नैतिकता ताक पर रख कर मानवी क्लोन बनाएँगे तब क्या होगा? ऐसे में आतंकवाद, दहशतवाद, आंतरराष्ट्रीय द्वेष भाव के चले तृतीय विश्व युध्द के डर से कब्र में पैर लटकाकर बैठे मानव और मानवीयता का क्या होगा? जैसे गंभीर प्रश्न संवेदनशील व्यक्ति तथा समाज के सामने भविष्य में खडे हो सकते है। कहानी का नायक वैज्ञानिक डॉ. सूरजभान को जब स्वामी जीवानन्द सब कुछ देने के लिए तैयार होते है, तब उसके दुष्परिणामों की ओर देखने की बजाय अपनी सारी नैतिकता ताक पर रखते हुए कहता है – "ठीक है स्वामी जी , मैं तैयार हूँ. यह काम चूपचाप होगा, इस लिए इसकी जानकारी किसी और को नहीं होनी चाहिए। मैं नहीं चाहता की किसी तरह का बखेडा खडा हों।"[01] डॉ. सूरजभान की वृत्तिवाले वैज्ञानिकों की वजह से समाज में गंभीर प्रश्न उपस्थित हो सकते है। क्योंकि कोई भी व्यक्ति मानवी क्लोन सामान्य व्यक्ति का थोडे ही बनानेवाला है।

आज के वैज्ञानिक युग में लोगों के द्वारा अध्यात्म के क्षेत्र में मिलने वाली श्रध्दा, आदर, सम्मान, पैसा, पद, प्रतिष्ठा की वजह से आए दिन सर्वज्ञानी, सदाचारी, चमत्कारी, दिव्यात्मा और दिव्यपुरूषत्ववाले बुवा-बाबा और स्वामियों का अवतार होने लगा है। जिसकी वजह से भारतीय समाज अंध्दश्रध्दा और अंधविश्वास से मुक्त होने की बजाय उसमें ही अधिक धसता जा रहा है। उन्हें यह समझ में नहीं आ रहा कि, 'वे अपनी मधुर वाणी से दुसरों को मोह, माया, काम और संसार की नश्वरता का उपदेश देकर स्वयं इन सब में रात-दिन लिप्त रहने लगे है। गरीबी और अज्ञान का लाभ उठाकर खुले-आम षडयंत्र, धोखा-धडी, लूट-पाट और वासनाओं का बाजार बसाने लगे है। हमें कंगाल कर स्वयं देश-विदेश में आश्रमों की शाखाएँ खोलकर दुनिया भर की माया, सुख-सुविधा और भेगविलास के साधन जुटाने लगे है। स्वीस बैंकों में पैसा भरने लगे है। जिसकी वजह से हम कंगाल और वे अमीर बनने लगे है।' उनके द्वारा श्रध्दा और भक्ति के बसाए हुए बाजर में आज पढे-लिखे तक शामिल हो रहे है। इसकी वजह से आज देश की चिंता बढ रही है। आज कथा के स्वमी जीवानंन्द बाबा के जौसे लोगों की वजह से सामान्य लोगों का अध्यात्म पर से विश्वास उठ रहा है।

आज दुनिया में ऐसे बहुत से लोग है, जिनके पास दुनिया भर की संपत्ति है। लेकिन उसे संभालनेवाला कोई वारिश नहीं है। ऐसी स्थिति में संपत्ति पर आंख गडाए लोगों से बचने तथा अपने उत्तराधिकारी को लेकर वे अधिक चिंतित है। खास कर अध्यात्म के क्षेत्र में यह बात अधिक प्रखर रूप में हमें दिखाई देती है। ऐसे में किसी बुआ-बाबा ने अपना उत्तराधिकारी पाने तथा भक्तों पर छाप बनाए रखने के लिए मुफ्त में मिली संपत्ति का प्रयोग मानवी क्लोन वनाने के लिए किया तो गडबडी हो सकती है। एक तरफ लोगों की श्रध्दा, अस्था और विश्वास के साथ खिलवाड किया जा सकता है, तो दूसरी तरफ कुँवारी माता का प्रश्न भी निर्माण हो सकता है। प्रस्तुत कथा के माध्यम से कथाकार ने

दोनों सवाल उठाए है। कथा में जब वैज्ञानिक डॉ. सूरजभान अपनी सारी नैतिकता ताक पर रखते हुए जीवानंन्द स्वामी का मानवी क्लोन बनाने के लिए तैयार हो जाता है, तब स्वामी उस क्लोन को अपनी विस्वस्थ सेविका के गर्भ में प्रत्यारोपित करना चाहता है। वह अपनी विस्वस्थ माया मां (सेविका) से कहता है – "मैं जन्म लेना चाहता हूँ - पीपल की पवित्र डाली से उगे पूर्ण वृक्ष की तरह। मृत्यु लोक में पुन: नयी काया में आने के लिए मुझे जडों का संबल दो जननी। मैं तुम्हारे गर्भ से पैदा होना चाहता हूँ, तुम्हारे ही जीवन रस पर पलकर तुम्हारे अंग पर खेलना चाहता हूँ। मुझे अपने शिशु के रूप में स्वीकार करो माया मां।"[02] ऐसे में माया मां स्वामी जीवानंन्द की चाल को समझने की बजाय उसे भगवान की अनुकंपा मानकर कुँवारी मां बनने के लिए तैयार हो जाती है। प्रस्तुत कथा में कथाकार की चिंता डॉ. सूरजभान और स्वामी जीवानंद जैसे लोगों की वजह से निर्माण होनेवाली कुँवारी माता की समस्या और धर्म के नाम पर होनेवाले अधर्म को लेकर दिखाई देती है। स्त्री जाति के साथ विश्वासघात होने की वजह से अनेक औरतों की जिंदगी दांव पर लग सकती है। वैसे भी देश को आज कुँवारी माताओं का प्रश्न सता ही रहा है। वर्तमान शासन प्रणाली से मोहभंग होने के कारण वही (ईश्वर) उनके जीवन की प्रेरणा और आशा की किरण है। वह भी चली जायेगी। ऐसे में लोग अपने मन को तसल्ली देने के लिए जाए तो कहाँ? उनके जीवन जीने की संजीवनी नष्ट हो जाने के कारण क्या वे जी पायेंगे? जैसे प्रश्न भी निर्माण हो सकते है।

आज एक तरफ राजनीति में धर्म और अध्यात्म का प्रयोग किया जा रहा है, तो दूसरी तरफ धर्म और अध्यात्म में राजनीति जोर पकडती नजर आ रही है। दोनों को एक-दूसरे की सुरक्षा की हामी मिलने के कारण सामान्य जनों की अवस्था 'धोबी का कुत्ता, न घर का न घाट का' जैसी बनती जा रही है। चुनाव के दिनों में धर्म और अध्यात्म के ठेकेदार राजनीति का साथ देने लगे है और सत्ता हथियाने के बाद पांच वर्ष की सुरक्षा का गॅरंटी कार्ड राजनीति धर्म और अध्यात्म के ठेकेदारों को दे रही है। एक में धर्म, अध्यात्म और योग के ग्यान का अभाव है, तो दुसरें में वैज्ञानिक समझ, इच्छा शक्ति, दूरदर्शिता का अभाव और संवेदनाहिनता, संकीर्ण मानसिकता, स्वर्थी वृत्ति का बोलबाला है। दोनों ने मिलकर 'अपना काम बनता, भाड में जाए जनता' वाले मुँहावरे को यथार्थ में उतरा है। उनकी मिली भगत को देखकर नार्गाजुन की पंक्तियाँ याद आती है, 'खादी ने मलमल से सांठ गांठ कर डाली, बिडला, टाटा, डालमियाँ की तीसों दिन दिवाली।' इस प्रकार की मानसिकता को समझाते हुए कथा का पात्र स्वामी जीवानंद अपने सेवक दास से कहता है – "सच पूछो तो सोबरन, अगर वह एम.एल.ए. प्रत्याशी न मिला होता तो आज हम भी भटक रहे होते। हमारी भविष्यवाणी, हमारे अशिर्वाद और अनुष्ठानों को ही उसने अपनी सफलता का मूल कारण मान लिया था न? मंत्री बनते ही उसने हमें अपना गुरू घोषित कर दिया। ... फिर तो भक्त और भक्तिनों की कंतार लगती ही चली गई... जिला....राज्य की राजधानी....और फिर केंद्र तक हमारे सुत्र जुडते गए... सत्ता के गलियारे में हमारी ख्याति उसने फैलायी...उसका लाभ क्या उसे कम मिला? उसके साथ हम और हमारे साथ वह आगे बढा।"[03] ऐसी स्थिति में हमारे देश की प्रगति, समृध्दि और विकास का क्या होगा? देश को अंध्दश्रध्दा और अंधविश्वास से मुक्ति कब मिलेगी? विज्ञानाधिष्ठित समाज की स्थापना कब और कैसे होगी ? बुआ और बाबाओं के चंगुल से देशवासियों को मुक्ति कब मिलेगी? डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम साहब का सपना कब साकार होगा? जौसे अनेक प्रश्नों के उत्तर मिल नहीं पा रहे है।

विज्ञान कथाकार ने अपनी कथा के माध्यम से एक मौलिक सुझाव दिया है, जिसका अनुपालन होते ही देश की अधिकांश समस्याओं को निपटाया जा सकता है। उनका स्पष्ट मत है कि, देश के स्वयं घोषित स्वामी, बुवा-बाबा, दिव्य आत्मा और दिव्य पुरूषों ने आज तक जितनी भी संपति छल-छद्म, धोखा-धडी, लूट-पाट आदि के माध्यम से कमाई है। उसका उपयोग विश्वधर्म और मानवता के कल्याण के लिए करना चाहिए। भक्तों का पैसा भक्तों के काम और देश का पैसा देश के काम लाया जाय तो उससे बडी देश भक्ति और मानवता की सेवा दुसरी हो नहीं सकती। इस दिशा में प्रयास धर्म और अध्यात्म के ठेकेदारों ने करना चाहिए। इस तरह के विचार लेखक ने युवा जीवानंद स्वामी (मानवी क्लोन) के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए कहा है – " आप लोग निराश न हों। झूठ और आडम्बर से सच जादा सुखद होता है। और अब आपके सामने सिर्फ सच है.... मैं आश्रमों की व्यवस्था को सुधारणा चाहता हूँ, ... आश्रमों की विपूल धनराशि को उद्योग, शेयरबाजार, कंप्यूटर कंपनी, एयरलाइंस या होटल श्रंखला जैसे कामों में लगाना चाहता हूँ.... मैंने अपने भक्तों के लिए योग-वेदांत के अध्ययन और अनुसंधान के लिए योग - वेदांत अकादमी खोलने का निश्चय किया है. .... लेकिन बाबा सेवक दास को यह योजना पसंद नहीं है, क्योंकि उन्होंने केवल गेरूवा चोला पहना है...।"[04] ऐसा होने पर एक तरफ देश की भौतिक प्रगति होगी तो दुसरी तरफ योग-वेदांत के अध्ययन से मानसिक समृध्दि प्राप्त होगी।

अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि, वैज्ञानिकों की महत्वकांक्षा और अमीरों में संपति के मोह के बीच मानवी क्लोन का संपूर्ण विकास होने की संभावना अधिक है। इस लिए उसके गलत इस्तेमाल से मानव और सृष्टि को बचाने के लिए हमें उपाय करने की आवशकता है। यह बात अलग है कि, स्वामी जीवानंन्द का मानवी क्लोन मानवता के हित में काम करता है। किन्तु अन्य सभी क्लोन वैसा ही काम करेंगे, यह कहा जा नहीं सकता। दुसरी महत्वपूर्ण बात है कि, देशवासियों को व्यक्ति की अपेक्षा समष्टि (मानवता, देश और विश्व धर्म) की पुजा करने पर बल देना चाहिए। तीसरा महत्वपूर्ण विचार है कि, इस देश की गरीबी, अज्ञान, अंध्दश्रध्दा और अंध्दविश्वास को केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण और वैज्ञानिक समझ ही दूर कर सकता है। इस लिए हमारा प्रयास विज्ञानाधिष्ठित समाज के निर्माण की दिशा में होना चाहिए।

संदर्भ-सूचि

1. कोख (विज्ञान कथा संग्रह) : देवेंद्र मेवाडी : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयीं दिल्ली (1998) : पृ. क्र. 87.
2. कोख (विज्ञान कथा संग्रह) : देवेंद्र मेवाडी : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयीं दिल्ली (1998) : पृ. क्र. 88.
3. कोख (विज्ञान कथा संग्रह) : देवेंद्र मेवाडी : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयीं दिल्ली (1998) :पृ. क्र. 83.
4. कोख (विज्ञान कथा संग्रह) : देवेंद्र मेवाडी : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयीं दिल्ली (1998) :पृ. क्र. 106.

सहायक ग्रंथ

1. मानव क्लोन : हरीश गोयल : इण्डियन पब्लिशिंग हाउस, जयपूर : संस्करण 2008.

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
22 जून 2021-वैचारिक विशेषांक Page No. : 18-21

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कैलाश बनवासी के साहित्य में विविध विमर्श

-प्रा. डॉ. बी. आर. नळे, शोध निर्देशक
-सौ. अमृता अनिल तीर, शोधार्थी
हिंदी विभाग, सुंदरराव सोळंके महाविद्यालय, माजलगाव।

मानव जीवन की प्रगति, उन्नति और विकास की धरोहर में साहित्य का विशेष योगदान रहा है। जिसमें साहित्यकार पहले अपने विवेक और संवेदना के धरातल पर मानव जीवन को प्रभावित करने वाली सभी समस्या, घटना, प्रवृत्ति, परिस्थिति और परिवेश का समग्रता के साथ आकलन करता है। उसी आकलन के अधार पर मानव समाज के सामने अपनी तर्कबुद्धि के सहारे निरंतर 'नए–नए विकल्प' रखता है। वही विकल्प व्यक्ति तथा समाज जीवन में व्याप्त समस्याओं को निष्कासित करते हुए परिवर्तन की राह दिखाते आएं हैं। वही विकल्प व्यक्ति तथा समाज जीवन में संवैधानिक मूल्यों का बीजारोपण करते हुए स्वातंत्र्य, समता, बंधुता, न्याय और धर्मनिरपेक्षता से प्रेरित समाज व्यवस्था के निर्माण में अपना योगदान देते हुए आज के मुकाम तक पहुंचे है।

आज विज्ञान–प्रौद्योगिकी के प्रभाव से प्रेरित भूमंडलीकरण ने सब किए कराएं पर पानी फेरना शुरू किया है। आज उसके मूल में बाजारवादी व्यवस्था काम करने लगी है। इस प्रकार की व्यवस्था ने व्यक्ति को इच्छा, आकांक्षा, महत्वकांक्षा और सपनों की ऐसी घुट्टी पिलाई है कि, आज हर कोई अपना विवेक खोकर उसकी धुन पर नाचने लगा है। इसी के चलते शोषण, अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न, उपेक्षा और प्रताड़ना की व्यवस्था अधिक मजबूत होने लगी है। आज बाजारू मानसिकता के चलते दिल, दिमाग, कर्म और खून के रिश्तों पर पैसा हावी हो जाने के कारण आदमी और उसके रिश्तों की कीमत दो कौड़ी की हो गई है। जिसके चलते घर–परिवार और समाज में आए दिन नयीं–नयीं समस्याएं जन्म लेने लगी है। जिसका चित्रण साहित्यकार बड़े संवेदनशीलता के साथ करते हुए नए विकल्प व्यक्ति तथा समाज के सामने अपनी रचनाओं के माध्यम से रखने लगे है। वही विकल्प विश्व समाज को समस्या के दल–दल में से बाहर निकालकर नई राह दिखा सकते है। उसी राह को ढूंढने के लिए विश्व समाज में प्रचलित परम्परा और समस्याओं पर विमर्श करने की आवश्यकता ने जोर पकड़ा। जिसके चलते विश्व साहित्य में विमर्श की चर्चा शुरू हो गई। इसी के चलते भारतीय साहित्य के केंद्र में विमर्श आ गया। उस विमर्श को लेकर हिंदी साहित्य के अंतर्गत सन १९६० के बाद चर्चा आरंभ हुई। इसका कारण यह है कि, आजादी के बाद भी स्त्री, दलित, आदिवासी, किन्नर, किसान, वृद्ध जैसे लोगों पर अन्याय अत्याचार हो रहे है। उनका मानसिक एवं शारीरिक शोषण हो रहा है। दलित, आदिवासी, किन्नर जैसे लोग समाज की मुख्य धारा से वंचित रहने लगे है।

आज दलित, आदिवासी, किन्नर तथा स्त्री पढ़ने लिखने और सोचने लगी। उन्हें अपनी गुलामी, लाचारी, बेबसी, गरीबी आदि के कारणों का एहसास होने लगा। वे इन सभी से मुक्ति पाने तथा समाज की मुख्य धारा

में आने के लिए न्याय की गुहार लगाने लगे। अपने जीवन में जो भोगा, सहा और अनुभूत किया, उसको अभिव्यक्त करने लगे। अपनी पीड़ा, दुःख, दर्द, तकलीफ तथा शोषण को विश्व के संन्मुख रखने लगे है। आज अभिव्यक्ति की इस छटपटाहट ने शोषितों को एक ओर लिखने के लिए मजबूर किया है, तो दुसरी ओर उनकी आवाज़ को पैना और तीखा बना दिया है। उसकी छटाएं हमें हिंदी साहित्य के अंतर्गत दलित, आदिवासी, किन्नर, किसान, वृद्ध, स्त्री शोषण की अभिव्यक्ति में देखने के लिए मिलती है। इस परम्परा में हिंदी साहित्य के युवा कथाकार कैलाश बनवारी का नाम प्रमुख रूप से सामने आ जाता है। जिन्होंने स्री, किसान, दलित और वृद्धों की समस्याओं को केंद्र में रखकर अपने साहित्य का सृजन किया है। प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से इन सबके बारें में कैलाश बनवारी की विचार धारा को उनके साहित्य के अधार पर रेखांकित किया जा रहा है।

स्त्री विमर्श :-

कैलाश बनवारी का २०१४ में आया 'लौटना नहीं है' यह उपन्यास स्त्री विमर्श पर आधारित उपन्यास है। इस उपन्यास की नायिका 'गौरी' है। गौरी को शादी के बाद अनेक यातनाओं का सामना करना पड़ता है। उसे अपने ससुरालवालों सहित अपने पति की उचित अनुचित सभी बातें माननी पड़ती है। गौरी का पति दिन–रात शराब पिता है और शराब पीकर रोज गौरी को मारता है। वह गौरी को शारीरिक एवं मानसिक रूप से प्रताड़ित करता है। गौरी रीति–रिवाज और माता–पिता के संस्कार की वजह से पति धर्म का निर्वाह करती है। पति के प्रत्येक जुल्म और शोषण को चुपचाप बिना विरोध करते हुए सहती है। लेकिन दिनों–दिन यह अन्याय–अत्याचार बढ़ते ही जा रहे थे। वह मारपीट गाली–गलौज और झगड़े से थक जाती है। वो यह सब नहीं सह पा रही थी।

एक दिन वह अपने पिताजी को चिट्ठी लिखती है कि, 'बाबूजी : अब मैं इस आदमी के साथ नहीं रह सकती। आपने जिस आदमी को मेरा हाथ पकड़ाया है। वह शराबी तो है ही रोज–रोज मुझसे मारपीट करता है। मुझे जान से मारने की बात करता है। अब मैं इसके साथ नहीं रह सकती। अगर आप लोग मुझे जरा भी चाहते है तो। मुझे इस नरक से निकाल लो नही तो मैं कुछ भी कर लूंगी। मैं आपको विश्वास दिलाती हूं कि, बाकी जीवन मैं आप लोगों पर बोझ नहीं बनूंगी। मैं आपसे हाथ जोड़कर अनुरोध करती हूं कि, मुझे इस दलदल से निकाल लीजिए।'[1] गौरी इस अन्याय अत्याचार से मुक्ति पाना चाहती है। वह अपने माता–पिता को विश्वास दिलाती है कि, मैं बाकी जीवन आप पर बोझ नहीं बनूंगी। माता–पिता को उस पर विश्वास रखना चाहिए था। जब गौरी अपने मायके में रहती है तभी गौरी के पति की मृत्यु हो जाती है। तलाक ना होने के कारण समाज उसे राजकुमार की विधवा का जीवन जीने के लिए मजबूर करता है। उसे विधवा की सारी रस्में रीति–रिवाजों को न चाहते हुए भी निभाने पड़ते है।

"इसी का चित्रण लेखक ने इस उपन्यास में किया है। लेखक ने इस उपन्यास के अंत में संकेत दिया है कि, अगर स्त्री पढ़ी लिखी हो और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो तो पुरुषसत्ता व्यवस्था को भी चुनौती दे सकती है।

किसान विमर्श :-

भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत में ७५ प्रतिशत से भी अधिक लोग खेती पर अपने जीवन का उदाहरण करते है। पहले वर्षा, जमीन, खाद सब अच्छा होने के कारण खेती में अच्छी फसल होती थी। धान के भी अच्छे दाम मिलते थे। इसी कारण हर किसान खेती करके बहुत खुश था। 'जय जवान जय किसान' इस

उक्ति के कारण किसान एक प्रतिष्ठा का विषय बन गया।

लेकिन आज इक्कीसवीं सदी में किसान प्रतिष्ठा का विषय न रहकर 'किसान आत्महत्या' का विषय बन गया है। इस समस्या ने पुरे विश्व को विचलित कर दिया है। कृषि प्रधान देश अब कृषक आत्महत्या प्रधान देश बन गया है और यह सबसे बड़ा चिंता और चिंतन का विषय बन गया है। आज हमारे देश में ही नहीं सारी दुनिया में सबसे अधिक दुर्दशा किसानों की ही है। किसान सबके लिए तो अन्न उगा रहे है। लेकिन खुद भुखा मरने के लिए विवश है। इस समस्या के अनेक कारण है। इसी का चित्रण लेखक कैलाश बनवासी ने अपने कहानी संग्रह 'प्रकोप' तथा अन्य कहानियां में किया है।

'प्रकोप' कहानी में लेखक ने अकाल का चित्रण किया है। इस कहानी का प्रमुख पात्र 'इतवारी' है। इतवारी ईमानदार, सीधा, नरमदिल आदमी है। उसे भगवान पर पुरा भरोसा है। इसी कारण वह अपने खेत में पुरी ईनामदारी, सच्ची लगन और मेहनत से फ़सल उगाता है। लेकिन बार–बार अकाल पड़ने के कारण फसल की मात्रा कम हो जाती है। इसी कारण इतवारी कर्ज में डूब जाता है। यहां तक कि, उसे अपने बैल तक बेचने पड़ते है। बार–बार निराशा के कारण इतवारी पागल हो जाता है और इसी पागलपन में एक दिन वह आत्महत्या करता है। इतवारी के मरने के बाद घर की पुरी जिम्मेदारी छोटे बेटे आजू पर आ जाती है। घर में जो थोड़ा सा धान बचा था। उसी को बेचकर ही लकड़ी, तेल, नमक लाया जाता था। एक दिन जब जानकी थोड़ा सा धान निकाल रही थी कि, तभी गीता ने रास्ता रोक लिया और भोलेपन से पूछा – 'माँ, सब धान बेच देंगे तो हम किसको खाएंगे?'[२] जो किसान पुरे विश्व के लिए अन्न उगाता है। आज वहीं किसान और उसका परिवार भुखा मरने के लिए विवश है। कितनी भयावह स्थिति है। इसी का चित्रण लेखक ने अपनी कहानियों में किया है।

दलित विमर्श :-

भारतीय संस्कृति का मूल ढाँचा वर्ण व्यवस्था, जातिवाद एवं ऊँच–नीचता के भेदभाव पर आधारित है। इसी कारण समाज का बहुत बड़ा वर्ग सदियों से उपेक्षित रहा है। मनुष्य होने के बावजूद समाज व्यवस्था ने उसे पशुतुल्य जीवन जीने के लिए विवश कर दिया है। इसी का चित्रण कैलाश बनवासी ने 'बाजार में रामधन' इस कहानी संग्रह में किया है। 'गुरुजी और लोकेश की कहानी' इस कहानी में लोकेश हरिजन है। अनुसूचित जाति का है। इसी संदर्भ में लेखक लिखते हैं –'गांव में और कुछ पता चले न चले, जात सबसे पहले पता चलती है।'[३] लोगों के उपनाम से कौन स्वर्ण है और कौन हरिजन है। इसका पता चलता है। लोकेश दलित होने के कारण उसका घर गांव के बाहर है। एक तो गरीबी और परिवार में तीन–चार छोटी–छोटी बहने। इसी कारण लोकेश अपने परिवार का पेट भरने के लिए अनेक यातनाओं का सामना करना पड़ता है। कभी–कभी तो लोकेश को भुखा ही रहना पड़ता है। अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए सुबह चार बजे से उठना पड़ता है। सुबह चार बजे ही उसे खेतों में सीला बीनने (दूसरों के खेत में फसल काटते समय जो धान गिरता है उसे उठाने के लिए) जाना पड़ता है और उसी धान से अपने परिवार का पेट भरना पड़ता है। इसी का चित्रण लेखक किया है।

वृद्ध विमर्श :-

'हम दो हमारे दो' संकल्पना ने संयुक्त प्ररिवार को विभक्त कर दिया है। परिवार और रिश्ते बिखरते हुए

दिखाई दे रहे है। इसी कारण वृद्ध विमर्श आज के युग की आवश्यकता बन गया है। क्योंकि आज वृद्ध को बोझ मानकर वृद्धाश्रम में छोड़ दिया जाता है। आज हम इतने व्यस्त हो गए है कि, हमारे पास बुजुर्गों को समझने का समय ही नहीं है। इसका मुख्य कारण संयुक्त परिवारों का टूटना है। इसी कारण हम बुजुर्गों की तरफ ना ही ध्यान दे पा रहे है और ना ही उनके अनुभव और ज्ञान का लाभ उठा पा रहे है। परिणाम स्वरूप हमारी पीढ़ियाँ एक दूसरे के नजदीक आने की अपेक्षा दूर होती जा रही है। यह खाई हमें अपनी सभ्यता और संस्कृति से दूर ले जा रही है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि, अपने बुजुर्गों के ज्ञान तथा अनुभव को दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित नहीं कर पा रहे है। इसी का चित्रण कैलाश बनवारी की कहानी 'प्रतिक्षा' में देखने के लिए मिलता है।

कहानी में बूढ़ा आदमी रेलवे से सफर करता है। उसकी पहचान मण्डावी से हो जाती है। बुढ़े के साथ एक छोटी बेटी है। इसीलिए मण्डावी बूढ़े से पूछते हैं कि, आपको बेटे है या नहीं। तभी बुढ़ा कहता है। 'दो–दो बेटे हैं। बहुएं है। पर इनका होना नइ होना मेरे लिए एक बराबर है। कुछ संयत होकर बोला एक बेटा रायपुर में है और एक बिलासपुर में। दोनों खा कमा रहे हैं, भगवान की दया से। मगर जब उनको अपने बुढ़ा रहे बाप की सुध नही तो क्या मतलब? बहुत जरूरी काम रहा तभी जाता हूं और दरवाजे से उसी पॉव वापस खैर'[४] नौकरी के कारण युवा पीढ़ी शहरों में जाकर रहने लगी है। लेकिन अपने मां–बाप को गांव में अकेला छोड़ दिया जाता है। इसी कारण परिवार का विभाजन हो रहा है। रिश्तो में दरार पड़ने लगी है। इसी का चित्रण अपनी कहानी में किया है।

निष्कर्ष :-

कैलाश बनवारी ने अपने साहित्य के माध्यम से स्त्री, दलित, आदिवासी, किन्नर, किसान, वृद्ध जैसे लोगों को न्याय देने का काम किया है। समाज में स्री पर अनेक अन्याय अत्याचार हो रहे है। किसान जो सारे विश्व के लिए अन्न उगाता है, वही किसान आज भूखा रहने के लिए विवश है। बार बार अकाल के कारण किसानों को आत्महत्या करनी पड़ती है। किन्नर, आदिवासी, दलित लोग समाज की मुख्यधारा से वंचित है। इसी कारण आदिवासी, किन्नर, किसान, वृद्ध, दलित जैसे लोगों को न्याय देने के उद्देश्य से साहित्य का सृजन किया है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1. कैलाश बनवारी, लौटना नहीं है, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण २०१४, पृष्ठ १४६
२. कैलाश बनवारी, प्रकोप तथा अन्य कहानियां, साहित्य भंडार इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, २०१५ पृष्ठ ३४
३. कैलाश बनवारी, बाजार में रामधन, भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण २००४, पृष्ठ १३१
४. कैलाश बनवारी, बाजार में रामधन, भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण २००४, पृष्ठ २६

मो. ९४२१६४२८९५

Email : tauramruta@gmail.com